अखण्ड भारत : साध्य और साधन

दीन दयाल उपाध्याय

भारतीय जनसंघ ने अपने सम्मुख अखण्ड भारत का ध्येय रखा है। अखण्ड भारत देश की भौगोलिक एकता का ही परिचायक नहीं अपितु जीवन के भारतीय दृष्टिकोण का द्योतक है, जो अनेकता में एकता के दर्शन करता है। अत: हमारे लिए अखण्ड भारत कोई राजनैतिक नारा नहीं है, जो परिस्थिति विशेष में जनप्रिय होने के कारण हमने स्वीकार किया हो, बल्कि यह तो हमारे सम्पूर्ण दर्शन का मूलाधार है। १५ अगस्त १९४७ को भारत की एकता के खण्डित होने तथा धन की अपार हानि होने के कारण लोगों को अखण्डता के अभाव का प्रत्यक्ष परिणाम देखना पड़ा और इसलिए आज भारत को पुन: एक करने की भूख प्रबल हो गयी है, किन्तु यदि हम युगों-युगों से चली आयी जीवनधारा के अन्त:प्रवाह को देखने का प्रयत्न करें तो हमें पता चलेगा कि हमारी राष्ट्रीय चेतना सदैव ही अखण्डता के लिए प्रयत्नशील रही है तथा इस प्रयत्न में हम बहुत कुछ सफल भी हुए हैं।

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणे।
वर्षं तद् भारतं नाम भारती यस्य संतति:।।

इस रूप में जब हमारे पुराणकारों ने भारतवर्ष की व्याख्या की तो वह केवल भूमिपरक ही नहीं अपितु जनपरक और संस्कृतिपरक भी थी। हमने भूमि, जन और संस्कृति को एक दूसरे से भिन्न नहीं किया अपितु उनकी एकात्मता की अनुभूति के द्वारा राष्ट्र का साक्षात्कार किया। राष्ट्रीय और एकतात्मक संस्कृति की जो आधारभूत मान्यताएँ जनसंघ ने स्वीकार की हैं, उन सबका समावेश 'अखण्ड भारत' शब्द के अन्तर्गत हो जाता है। अटक से कटक, कच्छ से कामरूप तथा कश्मीर से कन्याकुमारी तक सम्पूर्ण भूमि के कण-कण को पुण्य और पवित्र ही नहीं अपितु आत्मीय मानने की भावना अखण्ड भारत के अन्दर अभिप्रेत है। इस पुण्य भूमि पर अनादि काल से जो प्रजा उत्पन्न हुई तथा आज जो है, उनमें स्थान और काल के क्रम से ऊपरी भिन्नताएं चाहे जितनी रही हों, किन्तु उनमें सम्पूर्ण जीवन में मूलभूत एकता का दर्शन प्रत्येक अखण्ड भारत का पुजारी करता। अत: सभी राष्ट्रवादियों के सम्बन्ध में उसके मन में आत्मीयता एवं उससे उत्पन्न पारस्परिक श्रद्धा और विश्वास का भाव रहता है। वह उनके सुख-दु:ख में सहानुभूति रखता है। इस अखण्ड भारतमाता की कोख में उत्पन्न सपूतों ने अपने क्रियाकलापों से विविध क्षेत्रों में जो कुछ निर्माण किया उसमें भी एकता का सूत्र रहा है। हमारी धर्म-नीति, अर्थ-नीति और राजनीति, हमारे साहित्य, कला और दर्शन, हमारे इतिहास, पुराण और उपनिषद्, हमारी स्मृतियाँ और विधान सभी में देवपूजा विभिन्न व्यवधानों के अनुसार बाह्य भिन्नताएँ होते हुए भी भक्त की भावना एक ही है। हमारी संस्कृति की एकता का दर्शन अखण्ड भारत के पुरस्कर्ता के लिए आवश्यक है।

सम्पूर्ण जीवन की एकता की अनुभूति तथा उस अनुभूति के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करने के रचनात्मक प्रयत्न का ही नाम इतिहास है। गुलामी हमारी एकत्वानुभूति में सबसे बड़ी बाधा थी। फलत: हम उसके विरुद्ध भिड़े। स्वराज्य प्राप्ति इस अनुभूति में सहायक होनी चाहिए थी। वह नहीं हुई, इसीलिए हम खिन्न हैं। आज हमारे जीवन में विरोधी भावनाओं का संघर्ष हो रहा है। हमारे राष्ट्र की प्रकृति है "अखण्ड भारत"। खण्डित भारत

विकृति है। आज हम विकृति में आनन्दानुभूति का धोखा खाना चाहते हैं किन्तु आनन्द मिलता नहीं। यदि हम सत्य को स्वीकार करें तो हमारा अन्त:संघर्ष दूर होकर हमारे प्रयत्नों में एकता और बल आ सकेगा।

कई लोगों के मन में शंका होती है कि अखण्ड भारत सिद्ध भी होगा या नहीं। उनकी शंका पराभूत मनोवृत्ति का परिणाम है। पिछली अर्द्ध-शताब्दी के इतिहास तथा हमारे प्रयत्नों की असफलता से वे इतने दब गये हैं कि उनमें उठने की हिम्मत ही नहीं रह गयी। उन्होंने १९४७ में अपने एकता के प्रयत्नों की पराजय तथा पृथकतवादी नीति की विजय देखी। उसकी हिम्मत टूट गयी और अब वे उस पराजय को ही स्थायी बनाना चाहते हैं, किन्तु यह संभव नहीं। वे राष्ट्र की प्रकृति के प्रतिकूल नहीं चल सकते। प्रतिकूल चलने का परिणाम आत्मघात होगा। गत-वर्षों की कष्ट परम्परा का यही कारण है।

१९४७ की पराजय भारतीय एकतानुभूति की पराजय नहीं अपितु उन प्रयत्नों की पराजय है, जो राष्ट्रीय एकता के नाम पर किये गये। हम असफल इसलिए नहीं हुए कि हमारा उद्देश्य गलत था बल्कि इसलिए कि मार्ग गलत चुना। सदोष साधन के कारण साध्य की सिद्धि न होने पर साध्य न तो त्याज्य ही ठहराया जा सकता है और न अव्यावहारिक ही। आज भी अखण्ड भारत की व्यावहारिकता में उन्हीं को शंका उठती है, जिन्होंने उन दोषयुक्त साधनों को अपनाया तथा जो आज भी उनको छोड़ना नहीं चाहते।

अखण्ड भारत के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा मुस्लिम सम्प्रदाय की पृथकतावादी एवं अराष्ट्रीय मनोवृत्ति रही है। पाकिस्तान की सृष्टि उस मनोवृत्ति की विजय है। अखण्ड भारत के सम्बन्ध में शंकाशील यह मानकर चलते हैं कि मुसलमान अपनी नीति में परिवर्तन नहीं करेगा। यदि उनकी धारणा सत्य है तो फिर भारत में ६ करोड़ मुसलमानों को बनाये रखना राष्ट्रहित के लिए बड़ा संकट होगा। क्या कोई कांग्रेसी यह कहेगा कि मुसलमानों को भारत से खदेड़ दिया जाय ? यदि नहीं तो उन्हें भारतीय जीवन के साथ समरस करना पड़ेगा। यदि भौगोलिक दृष्टि से खंडित भारत में यह अनुभूति संभव है तो शेष भू-भाग को मिलते देर नहीं लगेगी। एकता की अनुभूति के अभाव से यदि देश खण्डित हुआ है तो उसके भाव से वह अखण्ड होगा। हम उसी के लिए प्रयत्न करें। मुसलमानों को भारतीय बनाने के लिए हमें अपनी गत अर्द्ध शताब्दी पुरानी नीति बदलनी पड़ेगी। कांग्रेस ने हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य के प्रयत्न गलत आधार पर किये। उसने राष्ट्र की और संस्कृति की सही एवं अनादि से चली आने वाली एकता का साक्षात्कार करने तथा सभी को उसका साक्षात्कार कराने के स्थान पर अनेकता का ही साक्षात्कार किया तथा अनेकों को कृत्रिम तथा राजनीतिक सौदेबाजी के आधार पर एक करने का प्रयत्न किया। भाषा, रहन-सहन, रीति-रिवाजों सभी की कृत्रिम ढंग से रचना की। ये यत्न कभी सफल नहीं हो सकते थे। राष्ट्रीयता और अराष्ट्रीयता का समन्वय संभव नहीं ।

यदि हम एकता चाहते हैं तो भारतीय राष्ट्रीयता जो हिन्दू राष्ट्रीयता है तथा भारतीय संस्कृति जो हिन्दू संस्कृति है, उसका दर्शन करें। उसे मानदण्ड बनाकर चलें। भागीरथी की इस पुण्य धारा में सभी प्रवाहों का संगम होने दें। यमुना भी मिलेगी और अपनी सभी कालिमा खोकर गंगा की धवल धारा में एकरूप हो जायेगी। किन्तु इसके लिए भगीरथ के प्रयत्नों की निष्ठा एवं "एकं सद् विप्रा: बहुधा वदन्ति" की मान्यता लेकर हमने संस्कृति और राष्ट्र की एकता का जो अनुभव किया है वह हजारों वर्षों की असफलता से अधिक है। अत: हमें हिम्मत हारने की जरूरत नहीं। यदि पिछले सिपाही थक गये हैं तो नये आगे आयेंगे। पिछलों को अपनी थकान को हिम्मत से मान लेना चाहिए, अपने अस्त्रों की कमजोरी स्वीकार कर लेनी चाहिए। लड़ाई जीतेंगे ही नहीं यह कहना ठीक नहीं। वह तो हमारी आन-बान और शान के खिलाफ है, राष्ट्र की प्रकृति और परम्परा के भी प्रतिकूल है।

(यह लेख पंडित दीन दयाल उपाध्याय की पुस्तक "राष्ट्र-चिंतन" से लिया गया है।)